श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः ।

शकुन्तला उपाख्यान

श्रीयुत कविकुल[illegible]

कालिदासविरचित

जिसको

निवाज कवि ने अनेक मनोहर छंदों में

संस्कृत नाटक से उलथा किया ।

और अब

चौधरी अयोध्याप्रसाद व पंडित लालमन

की आज्ञा से

भारतजीवनाध्यक्ष बाबू रामकृष्ण वर्मा

ने रसिकजनों के विनोदार्थ प्रकाशित किया ।

॥ बनारस ॥

भारतजीवन यन्त्रालय में मुद्रित हुआ ।

सन् १९०४ ई० ।

दूसरीबार १०००] [मूल्य चार आना ।

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः ।

कथाप्रारंभ

काव्यबद्ध

शकुन्तला दुष्यन्त के गान्धर्व विवाह के विषय में ।

सवैया

एक समय मुनिनायक कौसिक कानन जाय महा तप कीन्हौं ।
देह कों दीन्हों कलेश महा मिटि भेष गयो न परै कुछ चीन्हौं ॥
बासर नेम कियौं हो निवाज, निरंजन के पद में चित दीन्हौं ।
साधिकै जोग कौ आसन यों इन्द्रासन इन्द्र को चाहत लीन्हौं ॥
ह्वैवे कौं तीरथ कोऊ बच्यो न फिर्यो सिगरीं सरिता नदि कूलनि ।
चारि हू आगिकै बीचमें बैठि सह्यो सविता सनताप के सूलनि ॥
धूमकौ पान समान कियौ पग ऊरध बांधि अधोमुख झूलनि ।
चौसठि साल विशाल ऋषीश्वर खाइ रह्यो बनकै फल फूलनि ॥

घनाक्षरी छन्द ।

धूप के दिननि हेरै सनमुख सूरज सों चाहै अरु प्रबल अनल वारिधरि कों । जाड़े के दिननि यों रहत जल माही बैठि रहत नदी में जौं गरे लौं जल भरि कौं । देखि विस्वा-मित्र को विसाल नेम संयम यों कति ही सुरेस सो सरल

भयो डरि कैं। मैंन को प्रपंच करिवे कों मघवा ने तब मेन-
का बुलाई सनमान बड़ो करिकैं ॥ १० ॥

दोहा।

आदर देखि सुरेस को हरखति हृदयो खोलि।
या विधि तब मघवान सों उठी मेनका बोलि ॥

घनाक्षरी छन्द।

और को कहा है ब्रह्म हरि हर हू कों जो कहो तो
मनमथ वस काम करि आऊं सो। मेरे महा मोह में ठहरि
सके छिन भरि ऐसो तिहुंलोक में न जोगी ठहराऊं सो।
विस्वामित्र जू को जप तप नेम संयम धरी में खोइ आऊं
नेक आयसु करि पाऊं सो। मुनि के जो मन मोनकेतु ना
नचाऊँ महाराज को दुहाई मैं न मैंनका कहाऊं सो॥ १२॥

छप्पै।

गहि कर बीन प्रवीन निपट परवीन पियारो।
चढ़ि बिमान असमान लोक तें भूमि सिधारो॥
सोरह करि शृंगार पहरि द्वादश आभूषण।
लखत अंग को जोति गये छिपि शशि अरु पूषण॥
तप भंग करन को बेलि सो फुरसति मों फूली फली।
रति बनाइ निज मोहनो मुनि के मन मोहन चली ॥१३

हरिगीत छन्द।

.खि चन्द को नहिं होनि अब लखि जोति जा मुखचन्द को।
लखि चरण कर सुखमा भजो दुखमा सरोरुह चन्द को ॥

लखि नैन जाके ललित खञ्जन मीन अरु मृगनैनको ।
मुनि मैन के बस करन कों उतरी तपोवन मेनको ॥ १४ ॥

हरिगीत छन्द ।

फहरात चंचल नैन कंचल निपट लचकत फंफ तें ।
करत विविध कटाच्छ अलपत राग ऊंचे सुरन तें ॥
सुनि राग के मृदु सुरनि धुनि दृग खोलि दीन्हें ध्यान तें ।
कवि लखत लूट्यो तप जु छूट्यो छुट्या रिषि तप थ्यान तें ॥ १५ ॥

चौपाई ।

मारो मन्मथ साधि सरासन ।
छोड़ि दियो मुनि जोग को आसन ॥
जप तप संयम धरम नसायो ।
मोहि मेनका के ढिग आयो ॥
अङ्ग अङ्ग सों आनि लगायो ।
जोग किये को फल मनु पायो ॥
एक मुहूरत के सुख कारन ।
खोयो तपु करि वर्ष हजारन ॥
पीछे निपट बहुत पिछतानो ।
वा बन तें मुनि अनत परानो ॥
गर्भ मेनका कीन्हों धारन ।
तब सो मन में लगी विचारन ॥
भर गरभहि लै कें जो जाऊँ ।
तो सुरपुर मँह पैठि न पाऊँ ॥

भई सुता नौ मास भये जब ।

गई मेनका सुरपुर को तब ॥ १६ ॥

सवैया ।

घर छोरि सुता कों गई सुरलोकहिँ दूध पियायो न एक घरी ।

यह जानि कें मानस को जनमौ कछु मेनका नेकु दया न धरी ॥

कुलमांहि न कोउजो राखै कहूं वह काहिकों धौं करतार करो ।

सुधि लेवे कों कोऊ नहीं सँग में बन सूने शकुन्तला रोवै परी ॥

सवैया ।

न्हैवेकों जाय कढ़्यो तिहि मारग देखिकैं कन्व कृपाअतिकीन्हो ।

देव कि दानव कं नर को किधौं नागको है न परै कछु चीन्हो ॥

सुन्दर ऐसी सुता किहि कारनकोवन में गहि डारि धौं दीन्हो ।

रोवै अकेली परो बन मेंऋषि आय उठाय शकुन्तला लीन्हो ॥

दोहा ।

लीन्हे सुता शकुन्तला कलपत आश्रम आय ।

कह्यो गौतमी बहनि सों याकों देहु जिवाय ॥ १९ ॥

छप्पै ।

सुन्दर गात निहारि गौतमी गरैं लगाई ।

आयुर्बल तें जिअत नहीं करि जतन जिवाई ।

करैं कृपा ऋषि बहुत सबै सब के मन भाई ।

सकल तपोवन मांहि कन्व की सुता कहाई ॥

दिन दिन कन्या बढ़त प्रभा छवि अंग अंग फैलन लगी ।

गहि बांह सखिनि के संग मै द्रुमनछांह खेलनलगी ॥२०॥

दोहा ।

शकुन्तला संग दुइ सखी रहतीं आठौ जाम ।
इक अनसुया नाम अरु प्रियंवदा इक नाम ॥ २१ ॥

सवैया ।

बैस मैं तीनौं समान सखीं दिन ह्वं दिन तीनहुँ प्रीति बढ़ाई ।
प्रान तिहूंन के ह्वै रहे यौं इक देह मैं तीन हु देह दिखाई ॥
शोभा तिह्नन के अंगनि की कवि कैती कहै बरनी नहिं जाई ।
राखी तिह्नन के अंगनि मैं विधि तीनहु लोक की सुन्दरताई ॥

सवैया ।

काम कमान चढ़ाइ मनो जब ही कसि कैं कहुँ भौंहनि फेरै ।
बात कहै हँसि कैं जब हीं तब श्रौननि माहिं सुधा सो निचोरै ॥
जा मग ह्वै के धरै पग ता मग आनि अनंग अगारू ह्वै दौरै ।
सुन्दर हैं वह तीनौं सखीं पै शकुन्तला की छवि है कछु औरै ॥

दोहा ।

कछुक दिनन मैं कन्व मुनि बन तें कियो पयान ।
आश्रम राखि शकुन्तला तीरथ चल्यो नहान ॥ २४ ॥

सवैया ।

कछुखैवेकोभागोचहोजनहो तब हीं तुम गौतमीसोंकहियो ।
रिषिआवेजोकोउ इतैतिहिकौंकरिआदरपाइनको गहियो ॥
यह सीख शकुन्तलै दै जु गयो ह्वै उदास कछू करियो न हियो ।
कछू द्योसनिमैं फिरिआवतु हौं तबलौं तुम आनँदसौं रहियो ॥

चौपाई ।

लागी रहन आश्रम बिच बन मैं ।
भई उदासी कछुक दिनन मैं ॥
आश्रम कोउ अतीत जो आवै ।
ताकों आदर निपट दिवावै ।
पासहि के तंदुल गहि लावै ॥
मृगछौननि कौं आनि खवावै ।
पानी भरि मूलनि ढरकावै ॥
छोटे छोटे द्रुमनि बढ़ावै ।
सोई करै जो यह कछु भाखै ।
जिय तें अधिक गौतमी राखै ॥
शकुन्तला को सुख बहु चाहति ।
दोऊ सखियन संग में राखति ॥
बालवैस बहु द्योस बिताई ।
झलकनि लगी कछुक तरुनाई ॥ २६ ॥

घनाक्षरी ।

बिसरन लागो बालापन को अयानपन सखिन सौं सयानप की बतियां गढ़न लगी । दृग लागे तिरिछानि चालै पग मन्द लागी उर में कछुक उसांसे सी चढ़न लगी ॥ अगनि में आई तरुणाई की झलक लरिकाई अब देह तें हरें हरें कढ़न लगी । छीन लागी कटि या बचटि कैं छला सी हैज चन्द्र की कला सी तन दीपति बढ़न लगी ॥ २७ ॥

चौपाई ।

बनहूं मैं नहिं दुरति दुराई ।
शकुन्तला को सुन्दरताई ॥
जनु विरंचि कर आपु बनाई ॥
देखे तें मन सुधा सिराई ॥
वह उपमा बरनो नहिं जाई ।
पूर्व कथा भारत में गाई ॥ २८ ॥

घनाक्षरी ।

मृगन के चर्म ही को पहिरैं दुकूल और भूषन कहा है न गरे में जाकें पोति है । तौज जाके अग अंग रूप के तरंग उठें सुन्दर अनंग मानो अगनि की सोति है ॥ देह में नेवाज ज्यों ज्यों जोवन बढ़त जात त्यों त्यों हरि दिननि बढ़त जात जोति है । छिन और देखिये घरी में कछु औरे और छिन छिन घरो घरो औरै दुति होति है ॥ २९ ॥

दोहा ।

सुन्दर वैसो बर मिले शकुन्तला ज्यों आप ।
करिहैं ताको व्याह यह करो प्रतिज्ञा बाप ॥ ३० ॥
लागो रहै शकुंतला बन में यह परकार ।
एक समय दुष्यन्त नृप खेलन कढ़्यो शिकार ॥ ३१ ॥

घनाक्षरी ।

रथ असवार दौरे देखि के शिकार नृप कीन्हों श्रम

इतनों न जाको कछु माप है। दिन चढ़ि आयो बढ़ि बढ़ि अति दूरि पै न पायो तोऊ यातें चढ़ि आयो तन ताप है॥ जाय नजकाने घोड़े पौन के समाने दौड़े बान सों मिलाय खैंचि कान लगि चाप है। आगे तें हरिन भागो ताके नृप संग लागो पीछे सब सैना पीछे हरिना के आप है॥ ३२॥

सवैया।

ठौंक लगाय करेरी कमानमें कान लों खैंचि लियो सर साध्यो। चोट करै जब लों तब लों ऋषि लोगन दूरि तें आनि पुकाख्यो॥ रच्छा ऋषीश्वर लोगन की करिवे कों भयो अवतार तिहारो। हाहा रहौ महाराज हमारि तजो बन को मृग है मत मारो॥

चौपाई।

रिषि लोगन यह टेर सुनायो।
मृग पर नहिं नृप बान चलायो॥
वागें गहि रथ ठाढ़ो कीन्हो।
आशिर्बाद ऋषिन तब दीन्हो॥
करि प्रणाम नृप पूछो यह तब।
कहो कन्व को आश्रम कहँ अब॥
आज पापपुंजनि परिहरें।
मुनिवर को चलि दरशन करें॥
यह सुनि ऋषिन बहुत सुख पायो।
आश्रम निपट नगीच बतायो॥

महाराज अब कछु दिन भये ।
तीरथ करन कन्व मुनि गये ॥ २४ ॥
शकुन्तला बेटी करि पली ।
सौंप्यो ताकँह आश्रम खाली ॥
जो महाराज वहां लगि जैहैं ।
यह सुनि कन्व महा सुख पैहै ॥
तीरथ न्हाय जबै मुनि अइहैं ।
शकुन्तला तासों पुनि कहिहैं ॥
यह सुनि बचन नृपति मन बैठ्यो ।
रथ तें उतरि तपोबन पैठ्यो ॥ २५ ॥
रथ सारथी समेत टिकायो ।
आश्रम निकट आपु चलि आयो ॥
दच्छिण बाहु लगो तब फरकन ।
प्रफुलित भयो महीपति को मन ॥
कछुक दूरि आगे जब आयो ।
सगुन भयो ता कर फल पायो ॥
अद्भुत रूप वैस में नई ।
बाला तीन नजर परि गई ॥
शीत बात तें नहिं कछु डरैं ।
सब आश्रम की सेवा करैं ॥ २६ ॥

हरिगीत छन्द ।

सेवा न आश्रम की तजैं अति श्रमित ह्वै ह्वै आवतीं ।
कोमल कमल से करनि सों क्यारी नवीन बनावतीं ॥

सिगरो तपोवन सींचिबे कों सलिल श्रम करि ल्यावतीं ।
छोटे द्रुमन के तटनि भरि भरि घटनि कों ढुरकावतीं ॥२७॥

हरिगीत छन्द ।

सींचति द्रुमन के थकि गईं तन रह्यो श्रमजल छाय है ।
अति सिथिल सब अँग ह्वै गये डगमगति धरतीं पय है ॥
खुलि केस पास रहे बिथुरि भरती उसांस अनन्त हैं ।
तीनों सखीं यों सोहतीं मानों भये सुरतन्त हैं ॥
बिच द्रुमन के ह्वै जाति बाहर निकसि जोबन की छटा ।
खुलि गये कच यों तड़ित हूं पर गिरि परो मनु घन घटा ॥
सिगरे तपोवन में लसति यों गगन में ज्यों शशिकला ।
यह रूप सों श्रम मुनिन के सो करत बस शाकुन्तला २८॥

घनाच्छरी छन्द ।

बानी कहिये तो वह बीन को लिये हो रहे गौरी तो गिरीस अरधङ्ग में लगाई है । कमला न कान्ह के हिये तें उतरति अरु रमा के सरूप में न एतो अधिकाई है ॥ रति कहिये तो या विरोध अति हो है अरु याके तो अजौं लगि कछुक लरिकाई है । फेरि फेरि बेरि लगि हेरि हेरि हाख्यो नृप जानि नाहि परो यह को है कहां आई है ॥ २९ ॥

घनाच्छरी छन्द ।

निरखि शकुन्तला को नख सिख रीझि रह्यो आपु तो महीपति निछावरि सो कीन्हो सो । भयो है अचम्भो रति-

रह्यो है न ऐसो आस रूप को बखान को भयो है बुधि-हीनो सो ॥ कहत नेवाज सोभासिन्धु में समाने नैन मन जनु मैन के हवाले करि दीन्हो सो । बाढ़यो उर प्रेम गहि चित्र लिखि काढ़यो मनो ठाढ़यो नृप ह्वै रह्यो ठगो सो मोल लीन्हो सो ॥ ४० ॥

दोहा ।

शकुन्तला को रूप लखि सुफल भये नृप-नैन ।
श्रवन सुफल चाहत भये सुनि सुनि मीठे बैन ॥४१॥
सघन द्रुमन की ओट ह्वै दृग निमेख बिसराय ।
दुरें दुरें देखन लगो शकुन्तला के भाय ॥ ४२ ॥

चौपाई ।

राजहिँ ये देखहि नहिं कोऊ ।
पूछन लगीं सहेली दोऊ ॥
शकुन्तला जो सींचत जेते ।
मुनि के द्रुम प्यारे कहि तेते ॥
मुनि के तो प्रानन तें प्यारी ।
करी द्रुमनि की सींचनि हारी ॥
बिधि अतिही सुकुमारि सम्हारो ।
श्रमलायक नहिं देह तिहारो ॥ ४३ ॥

चौपाई ।

बतकहाव यों सखियन कीन्हो ।
शकुन्तला यह उत्तर दीन्हो ॥

ये द्रुम जे सब देत दिखाई ।
मैं जानति येहो मम भाई ॥
मुनि के कहें नहीं मैं सींचति ।
मोहि मया लागति इनको अति ॥
हरिन-चर्म की पहिरें आंगी ।
कसि बँधि गई गड़न उर लागी ॥
कर सों अँगिया खुलत न खोली ।
अनसूया सो तब यों बोली ॥
प्रियम्वदा कसि बाँधो छतियां ।
अनसूया ढीली कर अँगिया ॥
अनसूया हँसि अंगिया खोली ।
प्रियंवदा तब रिस करि बोली ॥
उकसति आवै छिन छिन छतिया ।
याते गाढ़ो ह्वै गई अँगिया ॥
बढ़त जात जोवन की लीला ।
नाहक मेरो करतीं गीला ॥
शकुन्तला सुनि के सरमानी ।
सींचन लगी द्रुमन भरि पानी ॥ ४४ ॥
अलि इक छोड़ि कुसुंभ उडानो ।
शकुन्तला मुख पर ठहरानो ॥
कुसुमित सुगन्ध पाय करि मधुकर ।

बैठ्यौ जाय मधुर अधरन पर ॥
ससकि हाथ तब हीं झहरायो ।
उड़ि अलि गयो फेरि फिरि आयो ॥
शकुन्तला ह्वां ते टरि आई ।
पीछे भ्रमर लगो दुखदाई ॥
शकुन्तला पुनि जित जित डोले ।
तिति तित भ्रमर गुंजरत बोले ॥
राजा निरखत मन अनुरह्यो ।
मन मन मधुकर सों अस कह्यो ॥ ४५॥

घनाक्षरी छन्द ।

ओठन समीप आन गुंजतओ मड़रात मानो बतकही की लगावत लगन हो । चंचल दृगनि की पलनि करी शोभित छूंकुओ फिर आनि कर कपोल फलकन हो ॥ प्यारी सस-कनि झहरावति करति तुम उड़ि उड़ि बैठत पियत अधरन हो । दुरि दुरि दूरि ही ते देखत खड़े रहत मानो हम कौने काज मधुप तुम धन्य हो ॥ ४५ ॥

चौपाई ।

शकुन्तला केतो कछु करै ।
सँग तें मधुप न टार्यो टरै ॥
बन में मधुकर बहुत सताई ।
शकुन्तला यह टेर सुनाई ॥

सखियेहु मोढिग अरबर आवहु ।
या पापो तें मोहिँ छुड़ावहु ॥
काटत आय टरत नहिं टारैं ।
होतु नाहि कछु हाथन झारैं ॥
निरखि सखिन यह हास बढ़ायो ।
हम कौं तो बिन काज बुलायो ॥
या गनीम सों आनि बचावे ।
नृप दुष्यन्तहि वेगि बुलावे ॥
तब नृप निकसि द्रुमन तें आयो ।
कहो कहो किह तुमहि सतायो ॥
निरखि नृपहि बिन मोल बिकानी ।
तीनों छकीं डरीं शकुन्तानी ॥
ठाढीं रहि न सकीं नहिं डोलें ।
जकि सों रहीं कछू नहिं बोलें ॥
अनसूया तब मन दृढ़ कीन्हो ।
महाराज कों उत्तर दीन्हो ॥ ४७ ॥

घनाक्षरी ।

जाके तेज होत न अनीति कहूं नीति कहो पानी एक घाट में पियत सिंह गाय है । जप तप करत सबै तपसी निर्भय तपो बन में दानव सकत नहिं आय हैं ॥ काहूं न सताई यह भोरो सो शकुन्तला उड़ि के सो भमरी भाजो भौन को

डराय है । अति ही अभीत महाराज श्री दुष्यन्त ताके राज में रिषिन कौन सकत सताय है ॥

दोहा ।

शकुन्तला सौं ताकि तब पूछो यह महिपाल ।
कहो तिहारे कुशल है छोटे द्रुम मृगबाल ॥
कम्प बढ़ो तन कंटकित मुख तें कढ़त न बैन ।
जकि सी रही शकुन्तला निरखि नृपति भरि नैन ॥५॥

चौपाई ।

शकुन्तला कों बोलि न आयो ।
अनसूया यह नृपहि सुनायो ॥
क्यों न होय अब कुशल हमारो ।
तुम से साधु करत रखवारो ॥
प्यादें श्रम करि तुम ह्यां आये ।
श्रमजलकन आनन में छाये ॥
शीतल छांह सघन तरु डारैं ।
बैठो इत हम पाय पखारैं ॥
शुभ भाग्य तें चरन तिहारे ।
आजु दिवस तुम अतिथि हमारे ॥
शकुन्तला क्यों भई अयानी ।
ल्याउ पियन को शीतल पानी ॥
तब नृप बैन मैंन-रससाने ।
देखत हीं हम तुम्हें अघाने ॥

मधुर मधुर कहती तुम बानी ।
यहै हमारी है मिजमानी ॥
तुम हूं थकीं सलिल के सींचे ।
बैठा घरिक द्रुमनि के नीचे ॥
तब बोली अनुसूया बांकी ।
बिहँसति शकुन्तला को ताकी ॥
अद्भुत आज अतिथि जो आये ।
सिगरे कहत बचन मन भाये ॥
इन कर डर न कछुक मन आनो ।
इन कों कहो उचित के मानो ॥
यह सुनि शकुन्तला छाया में ।
बैठी मोहि नृपति माया में ॥
शकुन्तला के हिय में पैठ्यो ।
छितिपालौ छाया में बैठ्यो ॥ ५१ ॥

घनाक्षरी छन्द ।

भागन तें बन में दुहुन भटभेरो भयो खोलो भग
आज दुहुन को भालु है । दोऊ दुहूं देखत अघात न
नई लगन को दुहुन कें साखी उर साल है ॥ मन में दु
के मनोज बान लागी संग एकै रग दुहुन को भयो
हाल है । हिये में महीप के शकुन्तला समानो सो शकुन
के हिये में समानो महिपाल है ॥ ५२ ॥

चौपाई ।

दोउ सखी दोउन निहारें ।
कोटि काम रति की छवि वारें ॥
शकुन्तला करि नैन लजौहैं ।
निरखति नृप कौं तकि तिरछौहैं ॥
नृप मुख तें यह बचन निकारो ।
भलो बनो संयोग तिहारो ॥
एकै रूप बैस एकै हो ।
दैहें तीनि प्रान एकै हो ॥
या सुनि नृप को कछू न बोलो ।
अनुसूया फिरि नृप सों बोली ॥
धनि यह देश जहां तुम आये ।
विघ्न होत ऋषि यज्ञ बचाये ॥
देव गन्धरव के मनमथ हो ।
चले पियादे क्यों यह पथ हो ॥
करहु कृपा संदेह मिटाओ ।
नाम आपनो हमें बताओ ॥
तब नृप आपुन भेद छिपायो ।
कह्यो हमें दुष्यन्त पठायो ॥
यह खिदमत करि देइ हमारो ।
ऋषि लोगन को बन रखवारो ॥

फिरत तपोवन में निशिवासर ।
नृप दुष्यन्त को हौं मैं चाकर ॥
कहि ये वचन महीप चुपाने ।
अनसूया पुनि उत्तर ठाने ॥
अब ऋषि सर्व सनाथ कहाये ।
तुम से साधु तपोवन आये ॥
भलो आनि तुम दरसन दीन्हों ।
हम लोगन किरतारथ कीन्हों ॥
वतरस में अति ही सुख पायो ।
फिरि महीप यह वचन सुनायो ॥
शकुन्तला यह सखी तिहारी ।
विधि अतिही सुकुमारि सम्हारी ॥
मुनिवर याहि व्याहि कहु दैहै ।
कै अब यासों तप करवहैं ॥
याको अंग न है तप लायक ।
कहा बिचार कियो मुनिनायक ॥
तब अनसूया उत्तर दीन्हो ।
कन्व महामुनि यह प्रण कीन्हों ॥
शकुन्तला सम सुन्दर ह्वै है ।
कारिहा शकुन्तला जो कहि है ॥
ऐसो वर काहू लखि पैहों ।
तब हौं याहि व्याहि तहँ दैहों ॥

अनसूया यह कह्यो कहानो ।
शकुन्तला सुनि कें सरमानो ॥
यह सुनि कें बोल्यो अवनीपति ।
शकुन्तला को लखि तन दीपति ॥
पहिलें बात बिचारि न लोन्हो ।
मुनि यह कठिन प्रतिज्ञा कोन्हो ॥
शकुन्तला जैसो है सुन्दर ।
कहो कहां मिलि है वैसो वर ॥
ढूंढ़ि जगत मुनिवर फिरि अइ है ।
शकुन्तला अनव्याह्यो रहि है ॥
तब अनसूया फिरि हँसि बोलो ।
खानि चतुरता को मनु खोली ॥
जब बिरंचि नोके दिन ल्यावत ।
मनबांछित बैठें घर आवत ॥
तुम से साधु कृपा उर धरिहैं ।
सुफल प्रतिज्ञा मुनि को करिहैं ॥
नृप जब पाई सुनि यह बानी ।
शकुन्तला अति ही सरमानी ॥
प्रियम्बदा बिहँसति आनन में ।
शकुन्तला के लगि कानन में ॥
कह्यो आज जातो तुम व्याहीं ।
करिये कहा कन्व घर नाहीं ॥

शकुन्तला भरि नैन लजाहो।
लखति तिरीछे फिरि फिरि जाहो॥
राजा शकुन्तला पर अटक्यौ।
राजहि ढूंढ़त सब दल भटक्यौ॥
आई फौज निकट बज मारो।
बन मैं शोर भयो अति भारो॥

सवैया।

घोरनिकी खुर थारनि कैं रज सों सिगरो नभमण्डल छायो।
जंगली जीवनि घेरिवे कों चहु ओर करोलनि को गनु धायो॥
खेलत फौज समेत शिकार नजीक दुष्यन्त महीपति आयो।
रे मृग आपने आपने बांधहु यों ऋषिलोगन शोर मचायो॥

चौपाई।

सुनि यह शोर सबै अकुलानो।
धक धक धरनि मुखनि कुम्हिलानो॥
करन न पाए नृप यह लीला।
मन मन करत फ़ौज को गीला॥
अनसूया भै-रस सों सानो।
यों कहि उठो नृपति सों बानो॥
कंपन लागी डर सों छातो।
अब हम सब आश्रम कों जाती॥
श्रम करि तुम आये आश्रम कों।
उचित तिहारी सेवा हमकों॥

सेवा हम कीन्हे बिनु जातीं।
यह विनती हम करत लंजातीं॥
दोष हमारो मन नहिं कीजे।
एक बार फिरि दरशन दीजे॥
शकुन्तला कों कर सों गहि कै।
चलीं सखीं यह नृप सों कहि कै॥
फैली तनमन व्याकुलताई।
राजा चल्यो फ़ौज यह आई॥

दोहा।

तनु आगे मनु जातु है शकुन्तला तनु जातु।
सनमुख पौतनिशान पट पीछे ज्यों फहरातु॥
या विधि अति ही दुचित ह्वै उतै चल्यो महिपाल।
शकुन्तला को इत चलत भयो निपट बेहाल॥

घनाक्षरी छन्द।

उरझोई द्रुमन दुकूल सुरझावे लोग, काढ़नि लगति कंटक बहु पगनि सों। कबहूं निवाज खुले केसन कसन मैं कबहूं अंगिरान लागति अँगनि सों॥ ऐसे छल छिद्र कै कै ठाढ़ी ह्वै रहति शकुन्तला निपट भई व्याकुल लगनि सों। सखियन को नज़रि निवारि नारि फेरि फेरि महिपालहि देखे द्दगन सों॥ ५८॥

इति श्रीसुधातरंगिन्यां शकुन्तलानाटक प्रथमोङ्क॥

अथ द्वितीयाङ्क ।

चौपाई ।

या विधि नृप सों लगनि लगाई ।
शकुन्तला आश्रम में आई ॥
प्रन प्रन पति शृङ्गार सिंगारे ।
सूने में सब अंग निहारे ॥
दिन में भूख प्यास नहिं लागी ।
परति न नींद राति भरि जागी ॥
सकुचि सखिन हूं सों नहिं भाखे ।
हिय की पीर हिये में राखे ॥

सोरठा ।

लगी कटारी तीर पीर लेत सहि सूरमा ।
नये विरह की पीर काहु सो सहि जात नहिं ॥ २ ॥
कहो न मानै कोय जैसी पीर बियोग की ।
जापै बीतो होय सोई जानै समुझि कें ॥ ३ ॥
दृग बरसत ज्यों मेह बैठत जाय इकन्त घर ।
पियरानी सब देह तहूं दुरावति सखिन सों ॥ ४ ॥
उर भरि रह्यो सनेह लागो आगि वियोग की ।
मनो बुझावत देह अँसुवन को झर लाय कें ॥

दोहा ।

वा दिन तें यह ह्वै गयो शकुन्तला को हाल ।
जा दिन तें उतनो नजरि देखा उन महिपाल ॥ ६४ ॥

चौपाई ।

महीपाल अति व्याकुल रहै ।
पीर हिये की कासों कहै ॥
शकुन्तला सों मन अटकायो ।
राज काज अब सब बिसरायो ॥
नई लगन घर जान न दीन्हो ।
डेरा निकट तपोबन कीन्हों ॥
कल न परै निस दिन महिपालै ।
शकुन्तला सुधि हिय में सालै ॥
मुनि लोगन को डर मन तन को ।
नेक न मिटत भरोसा मन को ॥
बिरह अग्नि सों तावत तनकों ।
नृप यों गिला करत मदन कों ॥
रे रे मदन महा अपराधी ।
निगट अनीति आनि तैं बांधी ॥
मन तें उपजि मनोज कहावत ।
तिहि मन कों तू कहा जरावत ॥

सोरठा ।

हिये बढ़ावत दाह, सो यह दोष तुम्हें नहीं ।
करत पाप यह राहु तुम्हें जो छाडत निगलि कैं ॥ ११ ॥
तुम्हें सुधानिधि नाउं लोग कहत जे बावरे ।
बारि देत सब ठाउं आगि जलन्ह के बुन्दन सों ॥

दोहा ।

शकुन्तला के बिरह सों व्याकुल अति महिपाल ।
एक दिवस कछु कहन कों आये है मुनिबाल ॥

चौपाई ।

है मुनि सिद्धि द्वार पर आये ।
सुनतहि राजा तुरत बुलाये ॥
आसिर्वाद दुहुन तब दीन्हों ।
करि प्रणाम नृप आदर कीन्हों ॥
तब ऋषि बोलि उठे है दोनों ।
बिना कन्व यह बन है सूनों ॥
महाराज है जग्य हमारें ।
सो ह्वै सकतु न बिन रखवारें ॥
राक्षस विघ्न करन को आवत ।
सब ऋषि लोगन आनि सतावत ॥
कछुक दिनन तुम चलो तपोवन ।
बिनतो करो सकल ऋषि लोगन ॥
बन को चहत हतो नृप आयो ।
सुनि मुनि बचन बहुत सुख पायो ॥
बिनती करि यों ऋषिन बुलायो ।
राजा हरखि तपोवन आयो ॥
आपु अकेलो नृप धनुधारो ।
करत ऋषिन को बन रखवारो ॥

पैठ्यो विरह नृपति के मन में ।
ढूंढ़त शकुन्तला को वन में ॥
ग्रीषम तरुन तेज तपि आयो ।
तब नृप मन में यह ठहरायो ॥
शकुन्तला यह धूप विकट में ।
बैठी नदी मालिनी तट में ॥
बिन देखे नृप धरत न धीरहि ।
आयो नदी मालिनी तीरहि ॥
फूले कमल भ्रमर जहँ बोलत ।
शीतल पवन मन्द तहँ डोलत ॥
हरषि मोर पिक करत पुकारें ।
झूकीं रहीं सघन तरु डारें ॥
शीतल सघन छांह जंह पाई ।
कमलदलन की सेज बिछाई ॥
शकुन्तला तो पीड़ी तामें ।
अति हो व्याकुल विरह विथा में ॥
घिसि घिसि के नित चंदन लावे ।
दासि कमल दल पौन डुलावे ॥

दोहा ।

आरत विरह महीप की ताहि कहत सरमाति ।
करत बहानो सखिन सों शकुन्तला इहि भांति ॥

चौपाई ।

ग्रीषम तरनि तेजतपि आयो ।
त्रियहि सो बन में दाह बढ़ायो ॥
उर में दाह कहा लों सहिहों ।
तब कल पैहों जब मरि जैहों ॥
शकुन्तला निदरति इमि प्राननि ।
भनक परो राजा के काननि ॥

दोहा ।

पहुँचो नृपति तहां जितै सुनै दीन ये बैन ।
विरहिन महा शकुन्तला देखि तबै भरि नैन ॥
मन मलीन तन छीन अति पियरानो सब अंग ।
दुखित भयो नृप देखि कें शकुन्तला को रंग ॥

चौपाई ।

तब नृप के मन में यह आई ।
अभो न दीजे इन्हे दिखाई ॥
रहे दुराइ द्रुमन तें गातन ।
सुनै श्रवण दै इन की बातन ॥

दोहा ।

यों कहि बन में दुरि रहे नृपति द्रुमन की ओट ।
शकुन्तला सखियान सों कहत विरह की चोट ॥

चौपाई ।

जा दिन तें वह बन रखवारो ।
दरशन दै कै फिर न सिधारो ॥
ता दिन ते बिसरो मुख हांसो ।
रहत गहैं दिन राति उदासो ॥
जरो जाति बिरहन के जारें ।
कहत नहीं लाजन के मारें ॥

दोहा ।

अनसूया के बचन सुनि प्रियम्बदा करि खेद ।
परगट ह्वै पूछन लगी शकुन्तला सों भेद ॥

चौपाई ।

सुन सखि है अब और न कोई ।
कै तें कै अब सखि हम दोई ॥
तैं हम तें अब कहा दुरावति ।
पीर हिये की क्यों न बतावति ॥
दिन दिन देह जाति दुबरानो ।
पियरानो सब अंग निशानो ॥
छिन छिन फैलति अंग छिनाई ।
घटत अकेलो नहा लुनाई ॥
दिन दुसहा यह दशा तुम्हारो ।
निश दिन छतिया फटै हमारो ॥

दाह निहारे तन में जेतो ।
तरनि तेज तातो नहिं तेतो ॥
छोडो लाज कहौ यह मानो ।
हम सों करनो कहा बहानो ॥
जिय को रोग जानि जो लीजै ।
तो फिरि तैसो जतन करीजै ॥
यह सुनि दुभकोलो अखियन सों ।
बोलो शकुन्तला सखियन सों ॥
तुम हो सखो प्रान को प्यारो ।
दुख अरु सुख में हो नहिं न्यारो ॥
बिथा बडो यह कब लगि सहिहों ।
तुम सों छोड़ि कौन तें कहिहों ॥
यातें मैं न कहत हों अजहूं ।
सुनि तव दुख ह्वै जैहै तुमहूं ॥
जब तें वह बन को रखवारो ।
तब हीं तें यह दशा हमारो ॥
छिन भरि पोर तरत नहिं टारो ।
कै अब वाहि दिखावहु प्यारो ॥
करो उपाय बेग हीं एरो ।
कै दे चुको तिलांजलि मेरो ॥
इतनो कहत गरो भरि आयो ।
लगी लाज नोचो सिर नायो ॥

यह दुख जिय को सखिन सुनायो ।
नृप श्रवननि में सुधा पियायो ॥
शकुन्तला यों बोलि चुपानी ।
कही सखिन फिरि मीठी बानी ॥
अब हीं ह्वै है सब मन भायो ।
भले ठौर तैं मन अटकायो ॥
आयो इत है बन रखवारो ।
राजा है वह प्रानिन प्यारो ॥
रच्छा कौं सब ऋषिन बुलायो ।
फेरि तपोवन हीं में आयो ॥
देखो हम अति ही दुबरानो ।
अंग अंग को रँग पियरानो ॥
कहत न कछू रहत मन मारे ।
भयो बिकल कछु विरह तिहारे ॥
एक पत्र लिखि पठवो वाकौं ।
परगट करि निज बिरह बिथा कौं ॥
दशा तिहारी जो सुनि पै है ।
तुरत तिहारे ढिग चलि ऐहै ॥

दोहा ।

कीजे यही उपाय अब सखिन कही समुझाय ।
बोली बहुरि सखीन सों शकुन्तला सरमाय ॥

चौपाई ।

यह उपाय तौं है अति नीको ।
याकों यह डर मिटत न जीको ॥
परगट ह्वै हो छोडति लाजनि ।
लेखो लिखि लिखि पठवत राजनि ॥
निरखो नृपति निरादर ठाने ।
हम कों तजै बनै फिरि आनै ॥
शकुन्तला यह डर मन कीन्हो ।
अनसूया फिरि उत्तर दीन्हो ॥
शकुन्तला तैं क्यों बौरानी ।
अनमिल कहति कहा तैं बानी ॥
देखि आपने घर धन आवत ।
कोऊ कहूँ किवार दिवावत ॥
शीतल किरन चन्द्र की लागी ।
कौन ओट दै राखत आगी ॥
इतो लोन में मूरखता है ।
तैं जिहि चाहैं सो तुहि चाहै ॥
लगनि तिहारी जो नृप जाने ।
धन्य भाग्य अपनो करि माने ॥
कागद कलम दवाइत नाहीं ।
सुनो अवन करि मेरो पाईं ॥

भलो भलो करि मन में बातनि ।

नख सों लिखो कमल के पातनि ॥

दोहा ।

सुनि ये बैन शकुन्तला सुधि जिय में ठहराय ।

पाती पंकज पात की नख सों लिखो बनाय ॥

पाती लिखि फिर सखिन सों शकुन्तला मुख चाहि ।

कहन लगी कै सुनहु तहँ लिखत बनो के नाहिं ॥

चौपाई ।

सखीं सुनन लागीं दै कानन ।

शकुन्तला खोल्यो तब आनन ॥

सोरठा ।

कीजे कौन उपाय दया तुम्हारे है नहीं ।

मन लै गये चुराय फेरि दिखाई देत नहिं ॥

कोमल सब अँग और रचे बिरंचि बिचारि कै ।

हिरदै निपट कठोर मन काहे तें ह्वै गयो ॥

चौपाई ।

शकुन्तला यह सखिन सुनायो ।

राजा निकसि द्रुमन तें आयो ॥

निकसि द्रुमन ते दरसन दीन्हो ।

शकुन्तला सों उत्तर कीन्हों ॥

सोरठा ।

निश दिन रहत अचेत घर लेबो भारू भयो ।
एक तिहारे हेत बनबासी हम हू भये ॥

चौपाई ।

यह कहि नृपति निकट चलि आयो ।
देखि सखिन अति ही सुख पायो ॥

दोहा ।

लागी उठन शकुन्तला आदर करिवे काज ।
छीन अंग तव देखि कें यों बोले महराज ॥

चौपाई ।

अति ही दुर्बल देह तिहारो ।
माफु तुम्हें ताजीम हमारो ॥
देखि दुसह यह दाह तिहारो ।
मन मलीन ह्वै गयो हमारो ॥
पौढ़ीं रहो गहें हम नारी ।
करें उताहिल जतन तुम्हारो ॥
हियो गयो भरि आनंद अति सों ।
प्रियम्बदा बोली छितिपति सों ॥
भले आज तुम अवसर आये ।
तुम सिगरे दुख आनि मिटाये ॥
तुम से वेग खबरि अब लैहैं ।
शकुन्तला तनु दाह न रहि हैं ॥

बैठो निकट गही अब नारी ।
सखे बैठई आज तिहारी ॥

दोहा ।

यों कहि तब मुसक्याय नृप बैठो वाही ठौर ।
रही लजाय शकुन्तला लखति सखिन की ओर ॥

चौपाई ।

प्रीति समान दुहुन की तौलो ।
अनसूया तब नृप सों बोलो ॥
एक बात तें नृप हम डरतीं ।
तातें यह हम विनती करतीं ॥
राजनि कें होतीं बहु नारी ।
जरें सवतिया दाह को जारी ॥
माइ न बाप कुटम्ब न भाई ।
शकुन्तला विधि दुखी बनाई ॥
तुम सो कछू निरादर ह्वै है ।
शकुन्तला पुनि जियत न रहि है ॥
अनसूया कहि बचन चुपानी ।
कही महीपति फिर यह बानी ॥
तुम हूं अब लगि मोहि न जानो ।
मैं बनाय यह हाथ बिकानो ॥
जे घर मेरे हैं बहुतेरी ।
शकुन्तला की है सब चेरी ॥

शकुन्तला यह सखी तिहारी ।
मोहि लगति प्रानिन तें प्यारी ॥
जब तें वह भरि दीठि निहारी ।
तब तें सुधि बुधि सबै बिसारी ॥
मोहि कछू अब घर न सुहातो ।
मैं अबलौं का घरै न जातो ॥
शकुन्तला जो मोहि न वरिहै ।
अपनो मोहि दास तो करिहै ॥
शकुन्तला बिन घरै न जैहौं ।
शकुन्तला को दास कहैहौं ॥
कही बात राजा अति नीको ।
आसा भइ सखियन के जीको ॥

दोहा ।

बिहँसी नृप की ओर लखि, शकुन्तला के गात ।
अनसूया सों कहि उठी प्रियम्वदा यह बात ॥

सोरठा ।

भूखे हैं मृग बाल ढूंढ़त है निज माय को ।
चलो सखी उठि हाल दीजें तिन्हें मिलाय अब ॥

चौपाई ।

चलीं सखीं दोउ छल करि के ।
शकुन्तला बोली तब उठि के ॥

दइयहु कों तुम नहीं डरातीं ।
मोहि कहां छोड़े अब जांतीं ॥
थरिकु रहो प्रिय पास अकेलो ।
यों कहि कै टरि गईं सहेली ॥
शकुन्तला तब उठी अकमिकै ।
राजा गहो बांह तब हँसिकै ॥
दिन दुपहर यह तपतु अनैसो ।
चाह तुम्हारो तन में ऐसो ॥
ऐसो ठौर कहां तुम पैहो ।
शीतल छांह छांडि कँह जैहो ॥
हम से सेवक निकट तिहारे ।
कहा सखिन के होत सिधारे ॥
तुम कहँ मो कहँ सौंपि सिधारीं ।
वे दोऊ प्रिय सखीं तिहारी ॥
सखियन को अब सोच न कीजे ।
जो कछु होय सो हम अब कीजे ॥
कहो अगर चन्दन घिसि ल्याऊं ।
कहो तो शीतल पवन डुलाऊं ॥
यह कहि के नृप करी ढिठाई ।
कर नहि शकुन्तला बैठाई ॥
धक धक छतिया लागी डोले ।
शकुन्तला ला[illegible] बोले ॥

महाराज यह उचित नहीं है ।
कहा हमारी बांह गही है ॥
बाप हमारो है घर नाहीं ।
अरु अबलौं हम हैं अनब्याहीं ॥
और ब्याह अब नहिं अभिलाखो ।
हम तुम कों मन में करि राखो ॥
बाप हमारो जब घर अयहै ।
तुम कों हमें ब्याहि तब देहै ॥
अबलौं तुम हम से नहिं ब्याहे ।
मोहि कलंक लगावत काहे ॥
शकुन्तला यों देखि डरानो ।
बोल्यो फेरि महीपति बानो ॥

दोहा ।

कहु कितने नृप की सुतन गंधर्व कीन्हें ब्याह ।
भई ब्याहि अरु पाइ के तिन की होत सराह ॥
गही बांह अब आजु ते तुम प्यारी हम नाह ।
हमें तुम्हें यह ठौर अब भयो गँधर्व विवाह ॥

चौपाई ।

मुनि कोउ न कछू डर आने ।
वह मुनिवर हैं निपट सयाने ॥
तीरथ न्हाय जबै मुनि ऐहैं ।
यह सुनि के बहुते सुख पैहैं ॥

जबलों बात कही नृप एतो ।
करी काम केती कमनैतो ॥
शकुन्तला लाजहिं भरि आई ।
गहि कर नृपबर गरें लगाई ॥
कर सों नृप छतिया गहि मसकी ।
शकुन्तला लोन्हो तव ससको ॥
चुम्बन कियो नृपति मन भायो ।
शकुन्तला मुख झझकि छुडायो ॥
शीतल पवन मन्द बहि आयो ।
सघन बायु में सुरति मचायो ॥
उर लाग्या अधरन रस चहुंके ।
शकुन्तला कोइल सी कुहुके ॥
भरि दुपहरि यों सुरति मचाई ।
बातें कहत सांझ ह्वै आई ॥
देखि गौतमी को उठि धाईं ।
दोउ सखीं कहन यों आईं ॥
पिय को हरबर करो बिदाई ।
फुफी गौतमो निकटहिं आई ॥
शकुन्तला सुनि निपट डरानी ।
बोलि उठी नृप सों फिरि बानी ॥
दुरहु द्रुमन में प्राणपियारे ।
हम तें फेरि भये तुम न्यारे ॥

कह्यो गौतमी अब इत ऐहै।
करि गहि मोहि घरे ले जैहै॥
इत तें कहो कहां तुम जैहो।
हमहिं फेरि कब दरशन देहो॥
दरस नहीं जो हम बर देहो।
हमें फेरि तुम जियत न पैहो॥
ऐसो कछू निसाना दीजे।
जाहि देखि मन धीरज कीजे॥
शकुन्तला ये बैन सुनाये।
नृप के नैन सजल है आये॥
तब नृप खोलि अंगूठा लीन्हो।
शकुन्तला के कर में दीन्हों॥
और बात नृप कहन न पाई।
निपट नगीच गौतमी आई॥
चलत गौतमी को पग बाज्यो।
सुनि नृप दुख्यो दुमन में भाज्यो॥
शकुन्तला फिरि दुख भरि आई।
पौढ़ि रहो जँह सेज बिछाई॥
तब लों तहां गौतमी आई।
शकुन्तला गहि गरे लगाई॥
पूछनि लगी गौतमी बाननि।
अब कछु दाह घटी तव आननि।

शकुन्तला यह वचन कह्यो तब ।
कछुक विशेष भयो तो है अब ॥
तब गहि शकुन्तला के कर कों ।
ह्यातें चली गौतमी घर कों ॥
शकुन्तला निज आश्रम आई ।
नृप दुख सागर थाह न पाई ॥
शकुन्तला संग जँह सुख पायो ।
वाही ठौर फेरि नृप आयो ॥
सूनो सेज कमल दल वारो ।
देखि भयो नृप कें दुख भारो ॥
बिरह ताप चढ़ि आयो तन में ।
नृप यों शोचन लाग्यो मन में ॥
कहां जाउं कैसे सुख पाऊं ।
यह दुख गाढ़ो काहि सुनाऊं ॥
अब यों कब फिरि दरसन पइहों ।
तब लों यह दुख कैसें सहिहों ॥
ज्यों ज्यों लखत सेज यह सूनो ।
त्यों त्यों बढ़त पीर उर दूनो ॥
मन में नृप यों शोच बढ़ायो ।
मुनिन महावन शोर मचायो ॥
महाराज क्यो सुधि बिसराई ।
जित तित दानव देत दिखाई ॥

लखत दानवन की परछांहीं ।
हमरो यग्य सकल रहि जाहीं ॥
ऋषिन दीन यों बचन सुनायो ।
तुरत बियोगी नृप उठि धायो ॥
हित सै भयो बिरह अति भारो ।
फेरि करन लाग्यो रखवारो ॥

इति श्रीशकुन्तलानाटके द्वितीयोऽङ्कः ।

———o———

अथ तृतीयोऽङ्कः ।

चौपाई ।

पकरि गौतमी आश्रम आई ।
बिरह लतनि में अति ही छाई ॥
बिथा बिरह की सहा न जाई ।
शकुन्तला सुधि बुधि बिसराई ॥
संग सखी तन कोउ न भावै ।
बैठि एकांत दृगनि बरसावै ॥
बिन देखें कल नेक न पावै ।
घरी घरी ज्यों बरसि बितावै ॥
सूनो सो सबरो जग लेखति ।
धरें ध्यान पिय मूरति देखति ॥
आई सुधि प्रीतम की रति को ।
तबै अंगूठी देखी नृप को ॥

घनाक्षरी ।

सुधि और सब कीन समुझावै वाके उर कछु नहिं भावै न सहेली कोऊ साथ में । अति ही दुचित सिर नाए सूने सदन में बैठो प्यारी धरि के बदन वाम हाथ में । चित्र कैसो लिखो नेक डोलति न बोलति न दुखन की मोट धरि दीन्हो विधि माथ में । सुनत इतो बात सूने वे ह्वै गये सगात बैठो ध्यान कीन्हे मन दीन्हे प्राण नाथ में ॥ २ ॥

चौपाई ।

शकुन्तला यों मन अटकायो ।
मुनि दुर्वासा आश्रम आयो ॥

सवैया ।

प्रियध्यानमेंबैठो [illegible] बाहींदह्यो ।
नहिंसासन बूझिकेआसनदीन्हो न आदर सों कछु बैन कह्यो ॥
तब यों दुर्वासा रिसाइ कह्यो जिहि को एहि भांति तूं ध्यान धयो । सुधि तेरी न सो करि है कबहूं यह आप मिताब दै जात रह्यो ॥ ४ ॥

बोलसुनोन ऋषीश्वरको न ऋषिश्वरको रनरखो परछाहीं ।
ध्यान धरेंजु हतो चित में तियध्यान धरें ही रही चितमाहीं ॥
क्रोधी महा दुरवासा ऋषीश्वर दीन्हो है आपपसारि के बाहीं ।
आयो कभे अब जातु रह्यो यह नेक शकुन्तलाकों सुधि नाहीं ॥

चौपाई ।

सुनत आप सखियां उठि धाईं ।
हरवर दुर्वासा ढिग आईं ॥
भयो सखिन के जिय दुख गाढ़ो ।
पांय पकरि कीन्हों मुनि ठाढ़ो ॥
[illegible] के नेहु निहोरे ।
बिनती लगीं करे कर जोरे ॥
क्रोधन इतनो तुम्हरे लायक ।
यह अपराध छमो मुनि नायक ॥
करो न कोप दया मन ल्यावहु ।
करहु कृपा यह आप मिटावहु ॥
यह बिनती मन धरहु हमारी ।
कन्वसुता सो सुता तुम्हारी ॥
दोऊ सखिन कही यह बानी ।
सुनि किरपा कछु मुनि मन आनी ॥
राजा गयो अंगूठो दैहै ।
वाहि लखतहीं फिरि सुधि ह्वैहै ॥
यह विधि छूटै आप हमारो ।
यह कहि के मुनि फेरि सिधारो ॥
छूटो आप हरख भयो गातन ।
दोऊ सखीं लगीं फिर बातन ॥

जो मुनि कह्यो सो है नहिं झूंठो ।
शकुन्तलहि नृपदई अंगूठी ॥
जब नृप को वेसुधि करि पावै ।
वहै अगूंठो वाहि दिखावै ॥
काहू सों न कहो नहि मानै ।
हमैं तुम्हैं यह आपहि जानै ॥
शकुन्तला जो कछु सुनि पैहै ।
कवनिहुं जतन न जीवति रहिहै ॥
यों कहि कै बातें दुखदाई ।
दोउ शकुन्तला ढिग आई ॥ ६ ॥

दोहा ।

निरखति नैनन सो कछू कछू सुनति नहिं कान ।
निहँचलचित्त शकुन्तला बैठि करति पिय ध्यान ॥ ७ ॥

चौपाई ।

शकुन्तला यों दिवस वितावति ।
राजा हिये न कछु सुधि आवति ॥
मुनिन विदा करि दीन्हो राजहि ।
गयो अपने राज समाजहि ॥
आप गयो मुनिद दुखदाई ।
शकुन्तला की सुधि बिसराई ॥
बहुत काल इहि भांति वितायो ।
शकुन्तला उर गर्भ जनायो ॥

नीक न लगति देह दुबरानी ।
अंग अंग कौ छवि पियरानी ॥
आलस आनि चित्त मे छायो ।
उतर्‌यो बदन उमगि उर आयो ॥
नेह पोछलो नृप विसरायो ।
तीरथ न्हाय कन्व मुनि आयो ॥ ८ ॥

दोहा ।

कछुक दिनन मैं कन्व मुनि आयो तीरथ न्हाय ।
शकुन्तला निज गर्भ सों मुनि कों लखय लजाय ॥ ९ ॥

चौपाई ।

मुनि वर होम करन लागे जब ।
भई अग्नि तें बानी यह तब ॥ १० ॥

दोहा ।

व्याही नृप दुष्यंत कों करि गंधर्व विवाह ।
शकुन्तला है गर्भ सों भलो भयो मुनि नाह ॥ ११ ॥

चौपाई ।

कढ़ी अग्नि तें जब यह बानी ।
सुनि के मुनिवर आनंद ठानो ॥
करी होम विधि मुनि मन भाई ।
शकुन्तला मुनि तुरत बुलाई ॥
लाजहि नखछत अंग छिपाये ।
आई शकुन्तला शिर नायें ॥

शकुन्तला ढिग मैं बैठाई ।
करन लगी मुनि बहुत बड़ाई ॥
बड़ो मोहो ते सुख यह दीन्हों ।
अति ही मोहि सुचित कर लीन्हों ॥
चक्रवर्ति सुत मै बर दीन्हों ।
जित तै ब्याह गंधर्व कीन्हों ॥
मैं अबको कत द्वै न रहिहौं ।
और तोहि सासुरे पठैहौं ॥
शकुन्तला को सुनि ससुरासो ।
भई सखिन के चित्त उदासो ॥
निरखि सखिन के मुख मुरझाये ।
शकुन्तला के दृग भरि आये ॥
भयो भोर रवि दई दिखाई ।
सिर तें शकुन्तला अन्हवाई ॥
विदा समै मुनि कन्व बुलाए ।
सब ऋषि बधू मिलन को आए ॥
मुनि ससुरारहि देत पठाए ।
शकुन्तला सिसकति शिर नाए ॥
बैठीं घेरि सकल ऋषिनारी ।
लगीं असोसैं देन पियारी ॥
प्रान समान होहु पतिप्यारी ।
लखि लखि सौतें करहि तिहारी ॥

सुत सपूत ह्वै है घर जाता ।
सुखसागर में बढ़ो समाता ॥
ये बातें कहि के हितकारीं ।
घर अपने मुनि बधू सिधारीं ॥
शकुन्तला ढिग और न कोऊ ।
कै गौतमि कै सखियां दोऊ ॥
शकुन्तला अंसुवन भरि आई ।
गह्यो गौतमी गोद बिठाई ॥
बड़ो बेर लो गूथि बनाई ।
फूलमाल सखियन पहिराई ॥
कासों कहैं कहां ते ल्यावैं ।
गहनो नहीं कहा पहिरावैं ॥
भरि भरि दुहूं दृगन जल मोचैं ।
दोऊ सखीं दुखित ह्वै सोचैं ॥
भूषन बसन सबै हम ल्याये ।
द्वै मुनि बालक गहनो ल्याये ॥
गहने को जिनि शोक बढ़ावहु ।
लेहु ललित गहनो पहरावहु ॥
गहनो देखि सखिन सुख पायौ ।
कहन लगी कित तें यह आयौ ॥

दोहा ।

देखि अचंभो सबन को दोऊ तब मुनिबाल ।
कहन लगे यह भांति है इह गहने को हाल ॥ १२ ॥

घनाक्षरी ।

कन्व गुरु हमको पठायो कै शकुन्तला को फूल तोरि ल्याउ फूल माला पहिराउ आनि । हम गये फूल तोरं ओर गति भई तब सिद्धि है गुरु को वह हम कों परति जानि ॥ काहूं पाये पान काहूं काजर ललित काहूं काहूं महाउर काहूं सेंदुर सुहाग बानि । रूखन के भीतरतें हाथन निकासि गहि भूखन वसन हमें दीन्हे बन देवतानि ॥

चौपाई ।

सुनि गौतमी सगुन ठहरायो ।
शकुन्तलहि गहनो पहिरावो ॥
सेंदुर सखियन मांग चढायो ।
काजर नैनन माहिं लगायो ॥
जावकरंग पगनि झलकायो ।
चुनि चट कीन्हौ पट पहिरायो ॥
बीरो सखिन बनाइ खवाई ।
शकुन्तला दुलहिन बनि आई ॥
जब लौ यह शृंगार बनायो ।
तब लों न्हाय कन्व मुनि आयो ॥
शकुन्तला को दुख रमि जागो ।
मुनि मन माहिं कहन यों लाग्यो ॥ १५ ॥

घनाक्षरी ।

धरत न धीर मरो भरि भरि आवत है निकसि निकसि

नीर आवत दृगनि में। हरष छिरानी जात कछु न सुहात तन मन अकुलात यों रह्यो न जात बन में ॥ आजु ससुरारि कों शकुन्तला सिधारैगी सो याही शोच सकुच सम्हार नहि तन में । मेरे वनवासी के भयो है दुख एतो दुख केते होत ह्वै है घरबासिन के मन में ॥ ११६ ॥

चौपाई ।

यह मुनि मन मे मोह बढ़ायो ।
शकुन्तला के ढिग चलि आयो ॥
बापहि देखि मोह सों पागी ।
शकुन्तला तब रोवन लागी ॥
दुख तें नीर रह्यो भरि नैननि ।
बोल्यो पुनि मुनि गद् गद् बैननि ॥
मंगल है पिय के घर जैबो ।
अब या समय उचित नहीं रइबो ॥
क्यों गोतमी नाहिं समुझावति ।
शकुन्तला यों रोवनि पावति ॥
है शुभघरी बिलम्ब न लावहु ।
अब हीं ह्यांतें याहि पठावहु ॥
यों कहि मुनि है शिष्य बुलाए ।
शकुन्तला संग को ठहराए ॥
गहि बहियां गौतमी उठाई ।
शकुन्तला ससुरारि पठाई ॥ ११७ ॥

दोहा।

दृग सेंती मुसकति चली शकुन्तला ससुरारि।

तब सबरे बन द्रुमन सों मुनि यों कह्यो पुकारि॥ ११८

घनाक्षरी।

फूलति तुम्हें निहारि ऐसें उर फूलति ही सुत के भये तें फूल होत जैसे नारि को। क्यारीं आल बालनि बनावति रहति याही श्रम में बितावतीं हुतीं जो याम चारि को॥ जौ लौं न पहिलें तुम्हें सींचि लेती हुती तौलौं मैं कहूंन कैहूं जो पियत हुतो वारि कों। सेवा इहि भांति जो करति हो तिहारी सोई सुनिये शकुन्तला सिधारी ससुरारि कों॥

चौपाई।

मुनिवर यह बन द्रुमन सुनायो।
पिकनि द्रुमनि चढ़ि शोर मचायो॥
कोयल कुंहकति चढ़ि चढ़ि डारिन।
मनु द्रुम बन बन करत पुकारन॥
देखि रही अपने द्रुम लाये।
शकुन्तला के दृग भरि आये॥
शकुन्तला यह शोक समानो।
सखियन सों बोली यह बानी॥
लाग्यो जड़ वृपनेहु निगोडो।
मोपै जात नहीं बन छोड़ो।

मेरो लाई द्रुम अरु पातो।
देखे दुख भरि आवत छातो॥
अब सेवा नाहीं है मोपै।
ये द्रुम जात तुम्हीं को सौंपै॥
यह सुन के भरि आई अंखिया।
बोलि उठो तब दोऊ सखियां॥
कहा सौंपतो ये द्रुम पातो।
हमैं काहिं तुम सौंपे जातो॥
यों कहि परम प्रेम सों पागीं।
सखी गौर के रोवन लागीं॥
मया सखिन के हिय अति बाढो।
शकुन्तला रोवत है ठाढो॥
बड़ो बेर लो मुनि समुझाई।
शकुन्तला आगे चलि आई॥
शकुन्तला मग फेरि सिधारी।
भयो सकल बन के दुख भारो॥
नाचनि मोरनि ने बिसराई।
उगिलत घास हरिन अधखाई॥
रह्यो चकित ह्वै नयन न डोलत।
दुखित भ्रमर गुंजत नहिं बोलत॥
जितने जात हुते बनबासो।
सबही के मन भई उदासो॥

सब वन में छाई विकलाई ।
शकुन्तला को सुक चलि आई ॥
पहरक तब लों दिन चढ़ि आयो ।
मुनि को यह गौतमी सुनायो ॥
देखो बडो बेरि कढ़ि आई ।
शकुन्तला को करो बिदाई ॥
सीख होय सो याहि सिखावो ।
ठाढ़े होउ न आगे आवो ॥
मुनि को भयो महा दुख गाढ़ो ।
भयो सबन को लै मुनि ठाढो ॥ १२० ॥

दोहा ।

शिष्यनसों मुनि कहि उठे मन विचारि ठहराइ ।
कहियो नृप दुष्यन्त सो यह सँदेस समुझाइ ॥ १२१ ॥

चौपाई ।

हम हैं आश्रित राव तिहारे ।
तुम हो रच्छक सदा हमारे ॥
शकुन्तला है सुता हमारो ।
याहि जानियो जिय तें प्यारो ॥
हमै न आश्रम आवन दीन्हो ।
आपहि व्याह गंधरव कीन्हो ॥
शकुन्तला जु न सुख में रहिहै ।
यह दुख मोपो सहो न जैहै ॥ १२२ ॥

दोहा ।

नृप के हेत सँदेस के सिष्यन सों कहि बैन ।

शकुन्तला को सीख तब लगो महामुनि दैन ॥ १२३ ॥

चौपाई ।

सासु ननद की सेवा करियो ।

पति के प्यार भूलि मति परियो ॥

सौतिन हू में हिलि मिलि रहियो ।

अपनो भेद न कबहूं कहियो ॥

भागन के न गरब मन धरियो ।

पति साजन तें नेक न टरियो ॥

या विधि तें पति के घर रहियो ।

सब घर सों कुलबधू कहैयो ॥

यह सिख सब मन में धरि लीजे ।

बन को मोहि बिदा अब कीजे ॥

अपने संग गौतमो लोजे ।

बिदा सखिन हूं कों अब कीजे ॥

शकुन्तला जल भरि अँसुवन को ।

रोवन लगो गरो गहि मुनि को ॥

मिलि कै मुनि को करो बिदाई ।

सखियन मिलि गहि गरें लगाई ॥

बिछुरन के दुख महा समानो ।

बडो बेर लों रोय चुपानो ॥

जो सराप दुरवासा दीन्हौं ।
सो सखियन अपने मन कीन्हौं ॥
अनसूया तब करि चतुराई ।
शकुन्तला सों बात चलाई ॥
अटकत चित्त बहुत काजनि में ।
सुधि वैसो न रहति राजनि में ॥
समयो बीति गयो बहुतेरो ।
नृप जो नेह बिसारै तेरो ॥
जो नृप गयो अंगूठी दै है ।
वाहि लखत हीं फिरि सुधि ऐहै ॥
सुनि सखि यातें जिनि बिसरावे ।
कहूं अगूठो जान न पावै ॥
यह सुनि डर तें छतिया डोली ।
शकुन्तला सखियन सों बोली ॥
यह सँदेह तैं मोहि सुनायो ।
याको मैं कछु भेद न पायो ॥
अति ही गूढ़ कह्यो तैं बानी ।
यह सुनि के हौं निपट डरानी ॥
तब सखियन यह बचन सुनायो ।
देखो दिन दुपहर ह्वै आयो ॥
बिदा होउ छोड़ो अब बातें ।
चलो उतावल पहुँचो जातें ॥ १२४ ॥

दोहा ।

चले शिष्य आगे तबहिं शकुन्तला के साथ ।
दोउ सखिया संग लै उतै चल्यो मुनिनाथ ॥ १२५ ॥

चौपाई ।

दोउ सखियां फिरि फिरि देखैं ।
सूनो सों सबरो जग लेखैं ॥
कछुक दूरि आगे तब डोलीं ।
हाथनि जोड़त फिरि यों बोली ॥
गई द्रुमन की ओट छिपाई ।
शकुन्तला नहिं देत दिखाई ॥
सखियन कौं आश्रम लै आयो ।
शकुन्तला पतिपुर नगिचायो ॥ १२६ ॥

दोहा ।

पतिपुर मारग निकट मे देख्यो भर्यो तलाव ।
शकुन्तला प्यासी भई गई तहां करि चाव ॥ १२७ ॥

चौपाई ।

पानी पियो प्यास तब भागी ।
शकुन्तला मुँह धोवन लागी ॥
भयो विनास महा है पल मैं ।
कर तें गिरी अंगूठी जल मैं ॥
गिरो अंगूठो जब जल माहीं ।
शकुन्तला कौं कछु सुधि नाहीं ॥ १२८ ॥

दोहा ।

शिष्यनि सहित शकुन्तला आई नृप की द्वार ।

खिलवत में बैठो हुतो तब नृप करि दरबार ॥ १२९॥

चौपाई ।

शिष्यनि को बातें सुनि लीन्हो ।

खोजनि जाय खबरि तब दीन्हो ॥

महाराज मुनि कन्व पठाये ।

शिष्य दोय द्वारि पर आये ॥

लीन्हे संग ललित इक नारी ।

करी चहत मनु नजरि तिहारी ॥

नारि सुनी नृप अचरज मानो ।

अति ही चिन्ता में चितु आनो ॥

निकरि यज्ञ शाला में आयो ।

मुनि के शिष्यनि कों बुलवायो ॥ १३० ॥

दोहा ।

शिष्यनि पीछें गौतमी पैठी नृप के द्वार ॥

पीछे सब के ह्वै चली शकुन्तला दरबार ॥ १३१ ॥

चौपाई ।

राजा करि सम्मान बुलाये ।

या विधि शिष्य कन्व के आये ॥

शकुन्तला लाजहि गहि गाढ़े ।

आई पिय घर घूंघट काढ़े ॥

चढ़ो अभाग्य भान तब जागो ।
नैन दाहिनो फरकन लागो ॥
यह असगुन तब आनि जनायो ।
शकुन्तला के दुख भरि आयो ॥
दीठि पसारि बिसारि निमेषन ।
शकुन्तला लागी नृप देखन ॥
लेखतहि अद्भुत रस सों पागो ।
मन मन नृपति कहन यों लागो ॥
को यह नारि कहां तें आई ।
बन में मुनिन कहां यहि पाई ॥
जान न परतु कहा ये आये ।
यहां याहि काहे कों ल्याये ॥
यह बिचार मन में नृप कीन्हो ।
आशिर्बाद मुनिन तब दीन्हो ॥ १३२ ॥

दोहा ।

आसन तें उठि दूर तें कीन्हो नृपति प्रणाम ।
छेम कुशल पूछन लगो छोडि और सब काम ॥ १३३ ॥
महाराज के राज में रह्यो न दुख को हेत ॥
तपति तरनि के तेज तें तम न दिखाई देत ॥ १३४ ॥

चोपाई ।

कहो कुशल सब मनि बनवारे ।
रहत कन्व गुरु सुखित तिहारे ॥ १३५ ॥

दोहा ।

जिनके आशिर्बाद तें लोग अमर ह्वै जात ।

तिन सिद्धन के कुशल को कौन चलावत बात ॥१२६॥

चौपाई ।

महाराज के ढिग हम आये ।

यह संदेश गुरू के लाये ॥

हम कों बिदा गुरू जब कीन्हों ।

यह संदेस तुम्हें को कहि दीन्हों ॥

जानो हम सब बात तिहारो ।

शकुन्तला है सुता हमारो ॥

जो गंधर्व व्याह तुम ठानो ।

सो हम कछू दुख नहिं मानो ॥

महाराज मे है गुन जेते ।

शकुन्तला हू मैं है तेते ॥

भलो भई सुनि हम सुख पायो ।

विधि यह भल संयोग बनायो ॥

शकुन्तला यह गर्भ सहित है ।

सुनि मुनि तुरत पठाई इत है ॥

शकुन्तला को घर मे राखो ।

मुनि को कह्यो सँदेस सुभाखो ॥

शकुन्तला हम इत पहुँचाई ।

हमकों तुम अब करो बिदाई ॥

मुनि को श्राप न मन ते डोलो ।
बकुध राजा फिर हौ बोलो ॥
मुनि के शिष्य प्रबोन प्रकृत हौ ।
तुम ये बातै बागत कहा हौ ॥
शकुन्तला किन ब्याही को है ।
मोहि नहीं यह सुधि नहिं है ॥
राजा कही कठिन यह बानी ।
मुनि शिष्यनि ने अति रिस ठानी ॥
सुनि नृपबैन सबै सुधि भागी ।
शकुन्तला कांपन तब लागी ॥
नृप के बचन धरम ते डोले ।
दोऊ शिष्य कोपि कै बोले ॥
महाराज कछु धरमहिं जानो ।
ऐसो अधरम मति मन आनो ॥
कहौ ब्याह तब करि छल घाते ।
अब ये कहन लगे तुम बातें ॥
कोई करत जो कछु मन आवत ।
राजा लोग न पीरहि जानत ॥ १२७ ॥

दोहा ।

राजा के सुनि बैन ये निपट उठी अकुलाय ।
शकुन्तला सो गौतमी कहन लगी समुझाय ॥ १२८ ॥

चौपाई ।

घरी एक छोड़ो तुम लाजहिँ ।
मुख उघार दिखरावहु राजहिँ ॥
मुख जो तिहारो देखन पावै ।
तो नृप कों अबहीं सुधि आवै ॥
कहि गौतमी घुंघट खुलवायो ।
शकुन्तला मुख नृपहिं दिखायो ॥ १३९ ॥

दोहा ।

पलक बिसारि निहारि तब शकुन्तला को रूप ।
नाहीं हां कछु करत नहिं रह्यो भूलि सो भूप ॥ १४० ॥

चौपाई ।

राजा जब कछु ओठ न खोले ।
मुनि के शिष्य फेरि तेहि बोले ॥
महाराज मन में सुध कीजे ।
अब हम कों कछु उत्तर दीजे ॥
शकुन्तला को लखि तन-दीपति ।
बोलो फिर यों बिसुधि महीपति ॥
बडो बेर लों सुधि करि देखी ।
मैं सपनेहूं यह नहिं पेखी ॥
तुम तो कहत कि तुम यह ब्याहो ।
मोहि कछू सुधि आवति नाहीं ॥

गर्भ सहित यह नारि बिरानी ।
कैसें राखिं सकौं करि रानी ॥
यह सुनि शिष्य रिसन सों पागी ।
या बिधि नृप सों बोलन लागी ॥
ऐसो पाप कहा मन आनत ।
तुम बिधि लोगन कों नहिं जानत ॥
कन्व महामुनि जब रिस करिहै ।
तुरतहिं तुम्हं जानि तब परिहै ॥ १४१ ॥

दोहा ।

करि के बातें कठिन गे राजा कों डरपाय ।
शकुन्तला सों शिष्य तब बोले निपट रिसाय ॥ १४२ ॥

चौपाई ।

काहू कों तब बूझि न लीन्हो ।
आपुहि व्याह गंधर्व कीन्हो ॥
जैसो कियो सो फल अब लीजे ।
राजा कों कछु उत्तर दीजे ॥
लाज छाड़ि अँखियन कों खोलो ।
शकुन्तला तब नृप सों बोलो ॥
महाराज यह नीति कहा है ।
यातें अधरम होतु महा है ॥
या मैं कहो कहा तुम पावत ।
क्यों बिन काज कलंक लगावत ॥

तब पहिले हम तुम्हें न जान्यो ।
कह्यो जु तुम कछु सो हम मान्यो ॥
तब वैसो करि के छल घातें ।
अब तुम कहत कहा ये बातें ॥
बिदा होत तुम दई अँगूठी ।
यातें हौं कहिहों नहिं झूठी ॥
और भेद अब कहा बतावों ।
वही अंगूठी कहौ दिखावौं ॥
शकुन्तला यों बोलि चुपानी ।
राजा कही फेरि यह बानी ॥
यह तुम बात न्याय की कीन्ही ।
अबलों क्यों न अंगूठी दीन्ही ॥
जो मैं लखन अंगूठा पाऊं ।
तो मैं तुमहिं सांच ठहराऊं ॥
परसि अंगूठी केरि ठिकानो ।
शकुन्तला को मुख पियरानो ॥
कर में तब न अंगूठी पाई ।
हाय हाय तिहि ठौर मचाई ॥
लै उसांस करि सजल निमिखनि ।
लगी गौतमी कों फिरि देखनि ॥
शकुन्तला अति ही सरमानी ।
राजा कह्यो बिहँसि यह बानी ॥

त्रिय चरित्र सुनि राखे बैननि।
ते हम लखे आजु निज नैननि॥
मैं कब तोकों दई अंगूठी।
ऐसी बात कहत क्यो झूंठी॥
परतिय तें मन विमुख हमारो।
चलि है कछु न प्रपंच तिहारो॥
विधि नृप के मन तें यों डोलो।
शकुन्तला नृप सों पुनि बोली॥
देखो मैं प्रभु की प्रभुताई।
जिहि विधि हौं अब नाच नचाई॥
नहीं अंगूठी कहा दिखाऊं।
कहो और मैं भेद बताऊं॥
एक दिना तुम हम बन माहीं।
बातें कहत हते चितचाहीं॥
मैं अपने कर सेय बढ़ायो।
तहां एक मृग को सुत आयो॥
वाहि चह्यो तुम बारि पियायो।
वह न तिहारे ढिग चलि आयो॥
तब मैं जल अपने कर लीन्हों।
मृग सुत आय तुरत पी लीन्हों॥
तब तुम तहां करी यह हांसी।
तुम ये दोऊ हो बनबासी॥

मृगसुत संगहि रहत तिहारे ।
पियहि नीर क्यों हाथ हमारे ॥
यह कहि के तब हँसी बढ़ाई ।
अब तुम सबरी सुधि बिसराई ॥
यह सुन सुधि मन नहिं आई ।
राजा फिरि यह बात चलाई ॥
या विधि मीठी बातें करि के ।
लेत तिया सब को मन हरि के ॥
या विधि अद्भुत बात बनाई ।
छू न गई मनु कहूं झुठाई ॥
यह सुनि मन में अति सतरानी ।
कही गौतमी नृप सों बानी ॥
महाराज तुम ही विसवासी ।
कपट कहा जानै बनवासी ॥
कपट कहां हम सीखैं बन में ।
कपट होत राजनि के मन मे ॥
यों कहि के गौतमी चुपानी ।
राजा फेरि कही यह बानी ॥
होत सुभावहिं तें चतुराई ।
सब नारिन में हम ठहराई ॥
सुनहु न कोयल की चतुराई ।
करतीं कागनि सों ठगहाई ॥

काग ह्वालैं सुत करि देतो ।
बडो भयें अपनो फिरि लेतो ॥
राजा कह्यो कठिन यह बानो ।
शकुन्तला सुनि कै सकुचानी ॥
कहा कहत है रे अन्याई ।
तैं मोसों कीन्हो ठगहाई ॥
तब मैं तोहि न ठग करि जान्यो ।
जो तूं कह्यो सो तब मैं मान्यो ॥
यों कहि नीचें सीस नवायो ।
दुख भरि गयो गरो भरि आयो ॥
मुख कों ढांकि दुखन सों पागो ।
शकुन्तला तब रोवन लागो ॥
ओठ दुहूं मिजन तब खोले ।
शकुन्तला सो रिस करि बोले ॥
नेहु करत काहू न जनायो ।
जैसो कियो सो फल अब पायो ॥
पूछ लीजियत पहिचाने सों ।
प्रीति न करियतु अनजाने सों ॥
शकुन्तला सों तब यो कहि कै ।
बोले तब नृप सों रिस गहि कै ॥
सुनो नृपति यह बात हमारी ।
भली बुरी यह नारि तिहारी ॥

छोड़हु याहि कि घर में राखहु ।
हम सों तुम अब कछु मति भाखहु ॥
ये बातें राजा सों कहि के ।
चले गौतमी को कर गहि के ॥
तुम हूं छोड़ो या सठ छोड़ो ।
कहां जांउ हौं जन्म निगोड़ी ॥
शकुन्तला यों रोय पुकारी ।
आपिहुँ शिष्यन संग सिधारी ॥ १४३ ॥

दोहा ।

शिष्यन के पीछे लगी [illegible] अकुलाय ।
पीछे देखि शकुन्तलहिं बोले शिष्य रिसाय ॥ १४४ ॥

चौपाई ।

कहा अभागिन तूं इत आवत ।
सोई करति जो कछु मन भावत ॥
ज्यों नृप कहत जो तैं है तैसी ।
करिहैं कहा सुता मुनि ऐसी ॥
साचु जो है यह तेरो कहिबो ।
उचित तोहिँ यह पिय घर रहिबो ॥
मुनि के आश्रम तूं अब रहि है ।
सब जग तोहि कलंकिन कहि है ॥
पिय को जो ह्वै रहि है दासी ।
तोऊ न तेरी ह्वै है हासी ॥

यों कहि के फिरि शिष्य सिधारे ।
राजा यों कहि फेरि पुकारे ॥
कहां जात हो छोड़ें याकों ।
झूठो आस देत हो ताकों ॥ १४५ ॥

दोहा ।

शकुन्तला की दुरदशा देखि दया मन ठानि ।
सोमराज प्रोहित बिबुध बोल्यो नृप सों आनि ॥ १४६॥

चौपाई ।

लरिका कों यह जावै जौलों ।
मेरे घरे रहै यह तौ लों ॥
ह्वै है सुत चक्कवे तिहारे ।
यह सब पंडित कहत पुकारे ॥
शकुन्तला जिहि पूतहिं जावै ।
सु जो चक्कवे लच्छण पावै ॥
तो यहि साचीहो करि मानो ।
महाराज अपने घर आनो ॥
और जो और तरह यह ह्वै है ।
तो अपने मुनि के घर जैहै ॥ १४७ ॥

दोहा ।

सुर के मुनि के श्रापतें नर बेसुध ह्वै जात ।
श्राप मिटें आवै सुरति फिरि पीछे पछितात ॥ १४८ ॥

चौपाई ।

यह सुनि नृपति कही यह बानी ।
करहु जो तुम अपने मन आनी ॥ १४९ ॥

दोहा ।

यौं लै आयसु नृपति सौं पौर राखि सब देह ।
शकुन्तला सौं कहि उठ्यो चलो हमारे गेह ॥ १५० ॥
शिष्य छोड़ या विधि गये या विधि छोड़ी नाथ ।
शकुन्तला रोवति चली सोमराज के साथ ॥ १५१ ॥
शकुन्तला को देखि दुख आगि लपट सी आइ ।
माय मैंनका लै गई शकुन्तलाहिँ उठाइ ॥

चौपाई ।

शकुन्तला को सोध न पायो ।
प्रोहित दौरि नृपति ढिग आयो ॥
महाराज कह कहिये बैननि ।
ऐसो अचरज देखो नैननि ॥
अंसुवन को गहि नैननि माला ।
चली साथ मेरे वह बाला ॥
धुनत दुहूंकर भाग अभागी ।
जात हुती मेरे सँग लागी ॥
तब इक आगि लपट सी आई ।
वाहि गगन लै गई उठाई ॥

यह सुनि हरष अंग उपजायो।
राजा यह तब वचन सुनायो॥
हम पहिले ही वह तजि दीन्हो।
भलो बाति परमेसुर कीन्हो॥
यह कहि प्रोहित घरहि पठायो।
नृप उठि शयनमन्दिरहि आयो॥
जोज सुरति आवत कछु नाहीं।
तोऊ भइ चिन्ता चित माहीं॥
नेकु न आवत नींद सुखन में।
रहति उदासी निशदिन मन में॥ १५३॥

इति श्रीशकुन्तलानाटकभाषायां तृतीयोऽङ्कः।

अथ चतुर्थोऽङ्कः।

चौपाई।

शकुन्तला जल में जु गिराई।
वही अंगूठी केवट पाई॥ १५४॥

दोहा।

वही अंगूठी हाथ ले बेंचन गयो बजार।
बेंचत हीं सो पकरि गो खाई अतिही मार॥ १५५॥

चौपाई।

नृप को नांउ अंगूठी देख्यो।
चोर केवटहिँ लोगन लेख्यो॥ १५६॥

दोहा ।

चोर जानि कै केवटहिँ पकरो तबै कुतवाल ।

तहां अंगूठी को लग्यो केवट कहन हवाल ॥ १५७ ॥

चौपाई ।

साहिब यह मै नाहिं चुराई ।

मै यह तालहि भीतर पाई ॥ १५८ ॥

दोहा ।

भरे ताल मछरीन के खेलत हतो सिकार ।

तहां अगूठा ललित यह कढ़ि आइ परिजार ॥१५९॥

चौपाई ।

यों सुनि केवट कों छुडवायो ।

कोतवाल नृप के ढिग आयो ॥

आय अंगूठो नृपहिं दिखाई ।

शकुन्तला नृप कों सुधि आई ॥

पैठो दुख जिय सुख कढ़ि भाग्यो ।

टप टप दृग जल बरसन लाग्या ॥

दोऊ कर सिर में दे मारे ।

हाय हाय मुख बचन निकारे ॥

और कछू न रही सुधि तन में ।

नृप यों शोचन लाग्यो मन में ॥

कासों कहों कहा मैं कीन्हीं ।

मैं अपने गर छूरी दीन्हीं ॥

प्राणप्रिया घर बैठें आई ।
मोपै घर में रहन न पाई ॥
भूलि गई है सब दुख दाई ।
अब वे बातें सब सुधि आईं ॥
प्रिया लाज तजि भेद बतायो ।
तऊं न मेरे मन कछु आयो ॥
प्रानप्रिया इत तें मैं छोड़ो ।
चले शिष्य उत छोड़ि निगोड़ो ॥
करि पुकार मग रोवन लागी ।
तोऊ दया नहिं मेरे जागी ॥
वह अब सब सुधि मन में करकति ।
कहा करी छतिया नहिं दरकति ॥ १६० ॥

दोहा ।

दई अंगूठी आनि करि जा दिन तें कुतवाल ।
तादिन तें लागो रहन महा दुखित महिपाल ॥

घनाक्षरी ।

देह पियरान लागी नेह की बिथा सों जागी भूख भागी नीद न परति एकौ छिन है । भावतु न राग बैराग सो रहत लीन्हे सुनि के दशा यों दुख लागत अरिन है ॥ आठों पहरन कराहत हो बितावत शकुन्तला की सुधि हिये सालति कठिन है । कैहूं दिन बीतत तो बीतत न राति अरु राति कहूं बीतति तो बीतत न दिन है ॥

चौपाई ।

राजा को यों देखि उदासी ।
सिगरे दुखित नगर के बासी ॥

घनाक्षरी ।

गाइबो बजाइबो सबनि बिसराय डार्‌यो छोहरनि खिलन को खेलिबो भुलाइगो । सब पुरवासी महा रहत उदासीन खोज हाँसी को सबनि के मुखनि तें हिरायगो ॥ नारि औ पुरुष मिलि सबही बिसारो सुख सिगरे नगर में निरोही दुख छाय गो । सब ही के सुख को दिवैया महिपाल सो शकुन्तला के शोच के समुद्र में सिराय गो ॥

घनाक्षरी ।

बिरही दुष्यन्त महाराज जू के राज को अमल न कहूं निर्मल निहारियत है । कहत निवाज कहूं पावत न कुंहूं-कन कोकिल बागन तें उडाई मारियत है ॥ बिकत न बजार में न केसरी गुलाब और चोंर के रंगीले बसनन फारियत है । फूलन न पावत द्रुमन में बनाय कूल काचीं कलीं गहि गहि तोरि डारियत है ॥

चौपाई ।

नित पियरात जात ज्यों रोगी ।
मन मारें नृप रहत बियोगी ॥
बारहिं बार गरो भरि आवत ।
लोचन असुअन की झर लावत ॥

राज काज तें चित्त सकेलो ।
बैठो रहत इकान्त अकेलो ॥
सूनो सो सिगरो जग लेखत ।
धरे ध्यान भावहि तिहि देखत ॥

दोहा ।

निहचल करि चित लाय मन मूँदि लए युग नैन ।
देखि ध्यान में भावतिहिँ कहन लगो नृप बैन ॥

चौपाई ।

मन तें दूरि करो निठुराई ।
परगट ह्वै अब देहु दिखाई ॥
कहा करौं तब सुधि नहिं आई ।
जैसो करो सो तैसो पाई ॥
विरह बिथा सो अब जिन मारो ।
छमो एक अपराध हमारो ॥
ज्यों हम त्यों हम सों हुइ आई ।
तुम अपनो मति तजो बडाई ॥
छोड़हु कोप दया मन ल्यावहु ।
होहु जिते तित तें कढ़ि आवहु ॥
इतनो कहत मूरछा आई ।
फैलि गई मुख में पियराई ॥
तन में निकसि पसीना आयो ।
डोलत अब कछु हाथ न पायो ॥

दौरि चतुरिया दासी आई ।
मुख पर आनि बयारि डुलाई ॥
देखि चतुरिका रोवन लागी ।
तब कछु नृपहिँ मूरछा जागी ॥

दोहा ।

देखि चतुरिकै सांस ले उठो नृपति यों बोलि ।
जागि उठो मनि मूरछा दीन्हे दृग तब खोलि ॥

चौपाई ।

तैं बिनु काजहि कों इत आई ।
महा मूरछा आनि जगाई ॥
घरिक मूरछा मैं कल पाई ।
फिरि मोकों तैं सुरति दिवाई ॥
दुख की खानि नृपति यों खोली ।
चतुर चतुरिका दासी बोली ॥

दोहा ।

महाराज अचरज बड़ो सर्ब गुणनि की खानि ।
शकुन्तला किहिं हरि लई यह कछु परी न जानि ॥

चौपाई ।

राजा तब वह बात सुनाई ।
हुती मैंनका की वह जाई ॥

दोहा।

सहि न सुता को दुख सको उतरि गगन तें आय।
माय मैंनका लै गई भुव तें वाहिँ उठाय॥

चौपाई।

राजा कही साँच तब बानी।
चतुर चतुरिका फिरि बतरानी॥

दोहा।

शकुन्तलहिँ जो लै गई पकरि मैनका आप।
महाराज तो हरषैं हुइहै बहुरि मिलाप॥

चौपाई।

तब लौं अपनो गिनति न कछु सुख।
माय सुता को देखति जब दुख॥
तुम्हे सुरति आई करि पैहै।
फेरि मैनका नाहिँ मिलैहै॥
राजा फिरि यह बचन निकारो।
ऐसो है नहिं भाग हमारो॥

दोहा।

हम भुवमंडल इत रहत रही जाय सुरलोक।
क्यों मिलाप ह्वै सकत अब मिटै न हमारो शोक॥

चौपाई।

यों कहि नृप मन गह्यो उदासी।
बोली फेरि चतुरिका दासी॥

महाराज मैं कहत न झूंठो ।
यह कैसे मिलि गई अंगूठी ॥
कहां गिरी जल मे किहिं पाई ।
महाराज के कर फिर आई ॥
चतुर चतुरिका यों समझायो ।
भेद अंगूठी को सुनि पायो ॥
महाराज अति दुख सो पागा ।
कहन अंगूठी सों यों लागो ॥
जग में बड़ा अभागो मैं रो ।
तोहूं बड़ो कुभागिन है री ॥
तोहि होति तो पहिरैं प्यारो ।
तासो छूटि भई तू न्यारो ॥
अब पीछ तूं हू पछतैहै ।
वैसो कहां अगूठो पैहै ।

दोहा ।

सुधि बुधि कछु तन में नहीं मन को कठिन हवाल ।
रहत बावरो सो बकत व्याकुल यों महिपाल ॥
शकुन्तला कों मैंनका जब लै गई उठाय ।
तब कश्यप मुनि नाथ के आश्रम राखी जाय ॥
कश्यप के आश्रम रहत बीति गयो कछु काल ।
शकुन्तला के सुत भयो भव्यो भाग्य सों भाल ॥

चौपाई।

भरत नाम सुत को ठहरानो।
कछु दिन मे वह भयो सयानो॥
गंडा बांधि गरें मुनि दीन्हो।
तिहि गंडा को फल अस कीन्हो॥

दोहा।

माइ बाप कों छोड़ि के और छुए जो वाहिँ।
काटे कालो नाग ह्वै यह गंडा तब ताहिँ॥
तब कछु दिन में मैंनका कह्यो इन्द्र सों जाय।
तुम राजा दुष्यन्त कों भेजहु यहां बुलाय॥
यहां बुलाय बनाइ के राजहि सुरति दिवाय।
शकुन्तलहिं गहि बांह तब दीजे फेरि मिलाय॥
नृपहिं बुलावन हेत तब करो बहुत सम्मान।
भेज्यो मातलि सारथी सुरपति सहित बिमान॥

चौपाई।

राजा विरहविथा सों छायो।
इन्द्र सारथी मातलि आयो॥
ललित बिमान इन्द्र को लायो।
मातलि ड्योढ़ी पर तब आयो॥

दोहा।

चोबदार नृप सों कही महाराज मघवान।
भेज्यो मातलि सारथी लायो ललित बिमान॥

चौपाई ।

सुनतहिँ राजा तुरत बुलायो ।
मातलि महाराज ढिग आयो ॥ २६ ॥

दोहा ।

मातलि कयो सलाम तब पूछन लग्यो नरेस ।
कहो कुशल सों रहत है सब के सुखद सुरेस ॥ २७ ॥

चौपाई ।

कुशल क्षेम मातलि कहि दीन्हो ।
राजा सों फिरि विनती कीन्हो ।
महाराज ढिग मोहि पठायो ।
यह सँदेस सुरनाथ सिखायो ।
हम सों दानव करत लराई ।
होहु हमारे आनि सहाई ॥
आनि दानवनि कों हन मारो ।
बड़ो भरोसो हमैं तिहारो ॥
मातलि जबहिं सँदेस सुनायो ।
सुनि महिपाल महा सुख पायो ॥ २८ ॥

दोहा ।

अम्बर आछे पहरि के कमर बाँधि हथियार ।
राजा अम्बर कों चल्यो हुइ विमान असवार ॥ २९ ॥

चौपाई ।

राजा चढ़ि विमान में आयो ।
मातलि गगन विमान चलायो ॥
नृप ह्वै मगन गगन नगिचायो ।
तब इक अचल नजरि में आयो ॥ ४० ॥

दोहा ।

परसु भुवार अकाश में लीन्हो ललित बहार ।
राजा यों पूछन लग्यो है यह कौन पहार ॥ ४१ ॥
मातलि तब कहि यों उठो हेमकुंठ है नाम ।
महाराज यह अचल में कश्यप मुनि को धाम ॥४२॥

चौपाई ।

कश्यप मुनि कहँ नृप सुनि पायो ।
मातलि कों यह बचन सुनायो ॥
रथ यह गिरि के सम्मुख कीजै ।
मुनिवर को दरसन करि लीजै ॥
मातलि अचल निकट रथ लायो ।
राजा उतरि अचल पै आयो ॥ ४३ ॥

दोहा ।

शकुन्तला को सुत तहां देखो जाय नरेस ।
बल सों सिंहनि पूत को खेंचत धरि धरि केस ॥ ४४ ॥
संग लगी है तपसिनी तिन की सुनतन बात ।
शकुन्तला को सुत गिनत सिंहिनि सुत के दांत ॥ ४५ ॥

चौपाई ।

या बिधि बालक कों लखि पायो ।
नृप को मन अद्भुत रस छायो ॥
बालक के सँग चित अनुरागो ।
मन मन नृपति कहन यों लागो ॥

ज्यों अपने सुत को उर लागति ।
याको मोहि मया त्यों लागति ॥
बिन सुत को विधि मोहि बनायो ।
मया लगति लखि पूत परायो ॥
बालहिं बैस बीरता वाको ।
यह अद्भुत सुत है धौं काको ॥
मन में उपज्यो अद्भुत रस अति ।
पूछन लग्यो तापसिन नरपति ॥ ४६ ॥

दोहा ।

बोलि उठीं तब तापसीं कहा कहैं हम हेत ।
याके पापी बाप को नाउं न कोऊ लेत ॥ ४७ ॥
सुलज सुशील पतिव्रता शकुन्तला सी नारि ।
जिहिँ बिन कारन-तजि दई घरतें दीन्ह निकारि ॥४८॥
ये बातें सुनि के भयो नृप के मन सन्देह ।
फेरि भेद पूछन लगो राजा करि अति नेह ॥

चौपाई ।

याको पिता पाप युत जो है ।
याको माय कहो तुम को है ॥
राजा इहि विधि बातें खोलीं ।
फेरि तापसीं दोउ बोलीं ॥ ५० ॥

दोहा ।

महा वीर यह बाल की शकुन्तला है माय ।
ताहि मैंनका ता समय ल्याई इहां उठाय ॥ ५१ ॥
यह सुनि कर आनन्द तब मन संदेह मिटाय ।
हाल पाय महिपाल तब लीन्हो सुतहिँ उठाय ॥५२॥
हरबर भरि आयो गरो दृग आँसू बरसाय ।
कहन तापसिन सों लगो राजा यों समुझाय ॥ ५३ ॥

चौपाई ।

जाको तुम मुख नाउं न काढ़ो ।
वह पापी मैं हौं हौं ठाढ़ो ॥
पतिब्रता वह प्रानपियारी ।
मैं पापी बिन हेत निकारी ॥
प्रानपियारी मोहि दिखावो ।
मेरी अइबो जाय सुनाबो ॥
बालक गरें जो गंडा राजे ।
सु है सांपु न हि काटतु राजे ॥

यह तापसिन भेद मन मानो ।

सांचो करि दुष्यन्तहि जानो ॥ ५४ ॥

दोहा ।

दौरि गईं तब तापसिन यह सब भेद बताय ।

आपुन शकुन्तलाहि कों ल्याईं जाय लिवाय ॥ ५५ ॥

मुख मैले मैले बसन फैले मैले केस ।

आई पियके पास तब शकुन्तला यह भेस ॥ ५६ ॥

देखत भरि आयो गरो दृगन रह्यो जल छाय ।

पिय ढिग ठाढ़ी ह्वै रही शकुन्तला शिर नाय ॥ ५७ ॥

चौपाई ।

राजहिँ और न कछु कहि आयो ।

शकुन्तला के पग शिर नायो ॥ ५८ ॥

दोहा ।

पाप लगावत क्यों हमें परसि हमारे पांय ।

यों कहि सुसकि शकुन्तला राजहिँ लियो उठाय ॥५९॥

चौपाई ।

शकुन्तला फिरि बात चलाई ।

क्यों तब मेरी सुधि बिसराई ॥

महाराज अब क्यों सुधि आई ।

राजा तब यह बात सुनाई ॥

यह मै जबै अंगूठी पाई ।

याहि लखतहीं सब सुधि आई ॥ ६० ॥

दोहा ।

जा दिन तें आई सुरति ता दिन तें यह हाल ।
निश दिन क्रंदत हो रह्यो जियन भयो जंजाल ॥ ६१ ॥

चौपाई ।

अब कछु गिनो न दोष हमारो ।
कठिन पाछिलो दुःख बिसारो ॥ ६२ ॥

दोहा ।

ये सुनि बचन शकुन्तला बोली करि अनुराग ।
महाराज को दोष कह बुरो हमारो भाग ॥ ६३ ॥

चौपाई ।

नख सिख नृपति सुखनि सों छायो ।
सुनि मुनि कश्यप नृपहिँ बुलायो ॥ ६४ ॥

दोहा ।

तन में नहो समात यों, मन में बड़ो हुलास ।
शकुन्तला अरु सुत सहित आयो नृप मुनि पास ॥ ६५ ॥

चौपाई ।

राजा लखि प्रणाम तब कीन्हो ।
आशिर्वाद महामुनि दीन्हो ॥
अपने ढिग मुनि नृपहिँ बुलायो ।
कुशल पूछि सादर बैठायो ॥ ६६ ॥

दोहा।

शकुन्तला की ओर लखि अरु लखि सुत अवदात।
इहि विधि तब महिपाल सों कही महामुनि बात॥६७

शकुन्तला है कुलवधू यह सुत है शुभ योग।
राज वंश के रतन तुम भलो बनो संयोग॥ ६८॥

चौपाई।

मुनिवर यह शुभ बात सुनाई।
राजा यह फिरि बात चलाई॥
मुनिवर कही दया मन ल्यावहु।
मोरे मन को भ्रम मिटावहु॥
तुम त्रिकाल की जानत बातें।
मैं तुम कों यह पूछत तातें॥ ६९॥

दोहा।

कियो गंधरब व्याह मैं याके सँग करि प्रीति।
फिरि मोकों सुधि ना रही अद्भुत है यह रीति॥७०॥

चौपाई।

पीछे यह घर बैठें आई।
मेरे घर में रहन न पाई॥
पहिलें मैं क्यों सुधि बिसराई।
लखत अँगूठी क्यों सुधि आई॥
भयो अचंभो यों चित माहीं।

मोकों जानि परत कछु नाहीं।
राजा इहिं विधि बचन सुनायो।
मुनिवर हँसि राजहिँ समुझायो॥ ७१॥

दोहा।

शकुन्तला कों मैंनका ल्याई जबै उठाय।
तबहीं यह धरि ध्यान मैं जानो भेद बनाय॥ ७२॥
दीन्हो श्राप शकुन्तलहिँ दुर्वासा करि रोष।
तातें तुम बेसुध भये तुम्हें कछू नहि दोष॥

चौपाई।

सो सराप सखियन सुनि पायो।
शकुन्तला कों नाहिँ सुनायो॥
जब सखियन परि पैर मनायो।
तब मुनि कछुक दया उर लायो॥
मुनि यह कह्यौ नृपहिं सुधि ऐहै।
जब निज लखन अंगूठो पैहै॥
यह कहि मुनि टरि गो दुखदाई।
सो यह बात सांच ठहराई॥
पहले तुम सब सुधि बिसराई।
लखत अंगूठो सब सुधि आई॥
याको दुख कछु मन नहिं आनो।
मेरो कहो उचित करि जानो॥

इन्द्र तुम्हें यहि हेत बुलायो।

शकुन्तला सों चहत मिलायो॥ ७४॥

दोहा—शकुन्तला अरु सुत सहित सब को लियो समाज।

करो जाय घर जग्य अब महाराज तुम राज॥ ७५॥

चौपाई—इन्द्रदूत सो कहाय पठावा।

मैं तुम को यहि हेतु बुलावा॥

काजी तुम से भयो हमारो।

तुम अब अपने घरहि सिधारो। ७६॥

दोहा—यों पुनि बैठि विमान में मुनि कों कियो प्रणाम।

शकुन्तला सुत सहित नृप आयो अपने धाम॥ ७७॥

चौपाई—इहि विधि भाग्य भाल मे जागो।

राजा राज करन फिर लागो॥

नृप के सुख सब रैयति राजी।

घर घर पुर में नौबति बाजो॥

शकुन्तला तब भइ पटरानी।

यह इतनी ह्वै चुकी कहानी॥ ७८॥

इति श्रीशकुन्तलानाटककथायां चतुर्थोऽङ्कः सम्पूर्णम्।

दोहा।

जो देखा सोई लिखा मोर दोष जिनि देव।

मात्रा अच्चर दोहरा बुध बिचार करि लेव॥